Shikshan Sanshodhan : Journal of Arts, Humanities and Social Sciences ISSN: 2581-6241 Volume - 3, Issue - 6, Nov-Dec – 2020
Bi-Monthly, Peer-Reviewed, Refereed, Indexed Journal Impact Factor: 3.589
Received on : 15/12/2020 Accepted on : 29/12/2020 Publication Date: 31/12/2020

राजनीतिक चेतना और महिलाएँ

डॉ. रूचि कश्यप
व्याख्याता, हिन्दी विभाग
एस.एस.जैन सुबोध कालेज आफ ग्लोबल एक्सीलेंस, सीतापुरा, जयपुर।

सार: राजनीति और शासन-प्रणाली में स्त्रियों की भागीदारी प्रागैतिहासिक काल से ही रही है। वैदिक साहित्य में स्त्रियों का शासिका, सैनानी, राज्य सलाहकार, मंत्री, विदुषी, समाजसेवी, पुरोहित आदि रूपों का उल्लेख मिलता है। स्त्रियों की चेतना को समझने से पूर्व स्त्रियों के विषय में विभिन्न विचारकों के विचारों व सिद्धान्तों पर ध्यान देना आवश्यक है क्योंकि चेतना रातों-रात उभरने वाली शक्ति नहीं, इसके लिऐ चिन्तन और सिद्धान्तों का सशक्त आधार चाहिए। अतः प्राचीनकाल से ही यद्यपि पुरूषसत्तात्मक समाज ने हमें शासित किया, तथापि समाज में स्त्री की स्थिति को पारिवारिक-सामाजिक-राजनैतिक संदर्भो में लक्षित करने के प्रयास विविध विद्वानों द्वारा प्राचीनकाल से किए जाते रहे हैं। वहीं सामाजिक जीवन में स्त्रियों की स्वतन्त्रता अथवा पुरूषों के साथ उसकी समानता के विचार का पूर्णतः निषेध किया है।

प्रमुख शब्द: राजनीति , दासता, महिलाएँ, चेतना, इतिहास ।

परिचय :

राजनीति और शासन-प्रणाली में स्त्रियों की भागीदारी प्रागैतिहासिक काल से ही रही है। मातृसत्तात्मक समाज व्यवस्था में नारी ही कबीले की मुखिया होती थी। हमारी पौराणिक देवियों और खुदाई से प्राप्त नारी प्रतिमाओं में बलशाली रानी-महारानी के रूप में शासिका रानी के दर्शन होते हैं। वैदिक साहित्य में स्त्रियों का शासिका, सैनानी, राज्य सलाहकार, मंत्री, विदुषी, समाजसेवी, पुरोहित आदि रूपों का उल्लेख मिलता है। रामायण-महाभारत काल में भी नारी की निर्णायक भूमिका रही है। मध्यकाल में भी सिकन्दर के भारत पर आक्रमण के समय पंजाब में रावी नदी के तट पर अश्वलायन राज्य की शासिका कृषि रानी थी जिसने सिकन्दर का डटकर मुकाबला किया था। मुगलकालीन इतिहास भी गोंडवाना की रानी दुर्गावती, चित्तौड़ की रानी कर्णावती, छत्रपती शिवाजी की माता जीजाबाई, मराठवाड़े की राजमाता ताराबाई के गौरव गान से अछूता नहीं रहा है। अंग्रेजी साम्राज्य से लोहा लेने वाली कित्तूर की रानी चेन्नमा, झाँसी की रानी लक्ष्मीबाई, रजिया बेगम, चाँद बीवी, अहिल्याबाई का शासन और शौर्य प्रसिद्व रहा है।

विषय वस्तु:

स्त्रियों की इस राजनीतिक चेतना को समझने से पूर्व स्त्रियों के विषय में विभिन्न विचारकों के विचारों व सिद्धान्तों पर ध्यान देना आवश्यक है क्योंकि राजनीतिक चेतना रातों-रात उभरने वाली शक्ति नहीं, इसके लिऐ चिन्तन और सिद्धान्तों का सशक्त आधार चाहिए। अतः प्राचीनकाल से ही यद्यपि पुरूषसत्तात्मक समाज ने हमें शासित किया, तथापि समाज में स्त्री की स्थिति को पारिवारिक-सामाजिक-राजनैतिक संदर्भो में लक्षित करने के प्रयास विविध विद्वानों द्वारा प्राचीनकाल से किए जाते रहे हैं। इस परिपाटी का अनुशीलन करने पर हम देखते हैं कि स्त्री की समाज में कितनी भागीदारी हो, इस पर उदारतावादी और संकीर्णतावादी-दोनों प्रकार के विचार मिलते हैं। भारतीय व पाश्चात्य विद्वानों ने इस विषय पर अनेक विचार व्यक्त किए हैं, जिनमें से यहाँ कुछ प्रमुख विद्वानों के मतों को उद्धृत करना आवश्यक समझते है-

सर्वप्रथम आचार्य मनु का संदर्भ भारतीय परिपे्रक्ष्य में विचारणीय हैं। 'मनु' स्त्री की सामाजिक-राष्ट्रीय भूमिका के प्रसंग में कहते हैं- 'ब्रह्मा ने स्त्रियों की प्रवृत्ति में ही कुछ ऐसे दुर्गुणों का सृजन कर दिया है कि यदि इन्हें स्वतन्त्र छोड़ दिया गया, तो ये व्यभिचार आदि दोषों से लिप्त हो जायेगीं, अतः पुरूष को अत्यन्त सतर्कतापूर्वक इन पर नियंत्रण रखना चाहिए'।1 इस प्रकार मनु ने जहाँ एक ओर पारिवारिक जीवन में स्त्रियों की प्रतिष्ठा व हितों को सुरक्षित रखा जाना आवश्यक माना है, वहीं सामाजिक जीवन में स्त्रियों की स्वतन्त्रता अथवा पुरूषों के साथ उसकी समानता के विचार का पूर्णतः निषेध किया है।

भारतवर्ष के प्रमुख विचारक-अर्थशास्त्री ''कौटिल्य'' ने स्त्रियों को पुरूषों के बराबर का दर्जा दिया है। कौटिल्य ने ''स्त्रियों और शूद्रों के सम्पत्ति के अधिकार को मान्यता दी है तथा उन्हें समाज का एक सामान्य सदस्य माना है। न्यायिक व्यवस्था के सम्बन्ध में भी कौटिल्य ने स्त्रियों व शूद्रों के प्रति किसी भेदभाव का समर्थन नहीं किया है। ''2

स्त्रियों के अधिकारों व प्रतिष्ठा के प्रति विचारों में सकारात्मकता की सुगबुगाहट प्राचीनकाल से ही थी, जिसकी परिपक्वावस्था हमें आगे चलकर 'राजा राममोहन राय' के विचारों में देखने को मिलती है। उन्हांेने स्त्रियों को बौद्धिक और मानसिक क्षमताओं की दृष्टि से हीन समझने के दृष्टिकोण का प्रबल प्रतिवाद किया और तर्कांे तथा ऐतिहासिक तथ्यों के आधार पर सिद्ध किया कि विकास के अवसर प्राप्त होने पर स्त्रियाँ बौद्धिक, मानसिक और चारित्रिक क्षमता में पुरूषों की अपेक्षा अधिक समक्ष और श्रेष्ठ हो सकती हैं। उन्होंने स्पष्ट किया कि ''सुशिक्षित और उन्नत व्यक्तित्व वाली महिलाएँ स्वयं तो समाज में उपयोगी भूमिका निभा ही सकती हैं, पुरूष-जाति भी उनसे प्रेरणा प्राप्त कर सकती है''।3 इस प्रकार स्त्रियों के शैक्षणिक, सामाजिक और आर्थिक अधिकारों के प्रति राजा राममोहन राय के प्रगतिशील विचारों के कारण उन्हें आधुनिक भारत में स्त्री-जागृति और स्त्री-स्वतन्त्रता का सूत्रधार माना जा सकता है।

जहाँ एक ओर भारतीय राजनीतिक विचारकों ने स्त्रियों के विषय में विभिन्न मत दिये, वहीं पाश्चात्य विद्वानों के विचार भी उल्लेखनीय हैं। प्रसिद्ध पाश्चात्य विद्वान 'प्लेटो' नारियों की मुक्ति तथा समानाधिकार के पक्षपाती थे। यह वह समय था जबकि स्त्री के अस्तित्व को परिवार के अतिरिक्त राजनीतिक व आर्थिक पहचान नहीं थी, तब प्लेटो कहते हैं-'परिवार एक ऐसा स्थान है, जहाँ मनुष्य की प्रतिभा का हनन होता है तथा पत्नी की मानसिक शक्ति चैके-चूल्हे में बर्बाद हो जाती है।''4 प्लेटो स्त्रियों के इस हीन जीवन का अन्त कर उन्हें पुरूषों के समान ही सार्वजनिक क्षेत्र में कार्य करने का अवसर देने के पक्षपाती थे। इस प्रसंग में 'अरस्तू' ने प्लेटो से सर्वथा विपरीत मत प्रकट किए। अरस्तू प्लेटो के समान स्त्री पुरूष की समानता में विश्वास नहीं करते थे। उनके अनुसार, ''पुरूष का विशेष गुण आदेश देना और स्त्री का विशेष गुण आदेश की पालना करना है''। 5 इस प्रकार अरस्तू के विचार से स्त्री की अवस्था दोयम है तथा पुरूष व स्त्री में स्वामी व सेवक का सम्बन्ध है। आधुनिक पाश्चात्य विद्वान 'जान स्टुअर्ट मिल' ने स्त्रियों की स्वतन्त्रता पर जोर दिया।

'मिल' ने बताया कि महिलाओं का पिछड़ापन किसी भी प्रकार उनकी बौद्धिक प्रतिभा की कमी का परिणाम नहीं है वरन् यह उनकी सदियों की दासता का परिणाम है। यदि दासता के बंधन से महिलाओं को मुक्त कर दिया जाए और उन्हे पुरूषों के समान ही उन्नति और विकास के अवसर दिये जायं तो कोई कारण नहीं कि वे पुरूषों के समान सिद्ध न हो सकें। 'मिल' महिलाओं की स्वतन्त्रता का इतना पक्षपाती था कि उसने ब्रिटिश संसद में इस प्रश्न पर सबसे पहले आवाज उठाई। उसके मतानुसार स्त्री-पुरूष की असमानता दूर करने का सबसे अच्छा उपाय यह है कि उन्हें पुरूषों के समान ही मताधिकार दिया जाये। 'मिल के अनुसार', ''राजनीतिक अधिकारों के सम्बन्ध में मैं लिंग के आधार पर भेद करना वैसा ही अप्रासंगिक मानता हूँ जैसे कि बालों के रंग के आधार पर भेद करना। अगर कोई भेद करना ही हो तो महिलाओं को पुरूषों की तुलना में मताधिकार की अधिक आवश्यकता है क्योंकि शारीरिक दृष्टि से निर्बल होने के कारण वे अपनी रक्षा के लिए विधि और समाज पर अधिक निर्भर हैं।''6 इस प्रकार 'मिल' पूर्णतः स्त्री-स्वतन्त्रता व स्त्री-अधिकारों के पक्ष में तो थे ही, स्पष्टतया स्त्री की सामाजिक भूमिका के साथ-साथ उसकी राजनीतिक चेतना को भी आपने मान्यता दी और स्त्री के स्वतन्त्र मत-प्रस्तुतीकरण को महत्वपूर्ण माना। यहाँ से हम स्त्री-जीवन के ऐतिहासिक क्रम में एक मील का पत्थर जुड़ना प्रत्यक्ष पाते हैं, जहाँ से आधुनिक चेतना के राजनीतिक पाश्र्व में स्त्री की अस्मिता दर्ज होती है।

इस प्रकार उपर्युक्त भारतीय एवं पाश्चात्य चिन्तकों के विचारों को उद्धृत करने का महत्वपूर्ण प्रयोजन यह है कि स्वतन्त्रता आंदोलनकालीन भारत में और उसके पश्चात् स्त्री की राजनीतिक चेतना विषयक उपर्युक्त पृष्ठभूमि तैयार हो रही थी, लेकिन यह ठीक उसी तरह थी जैसे स्त्रियों को बैसाखी पकड़कर दौड़ने के लिऐ कहा जाए, लेकिन आवश्यकता इस बात की थी जब उन्हें स्वयं मैदान में उतरकर और विशेष तौर पर राजनीति के मैदान में उतरकर अपने अधिकार व वर्चस्व को सिद्ध करना था। यह काम हमारे यहाँ स्वतन्त्रता संग्राम के दौरान प्रारम्भ हुआ व इसने स्वतन्त्रता के पश्चात मुहिम रूप धारण किया, जब वस्तुतः स्त्री चुनाव लड़ने, सत्तासीन होने व अपने राजनीतिक अधिकारों का प्रयोग करते हुए शासन-व्यवस्था, सामाजिक न्याय और आर्थिक प्रणाली को प्रभावित करने लगी।

जिस प्राचीनकाल में विविध विचारकों ने स्त्री के सामाजिक, राजनीतिक जीवन की बात करना प्रारम्भ किया था, तब किसी ने सोचा भी नहीं था कि असूर्यम्पश्या स्त्री किसी दिन सात पर्दो में से निकालकर राज्य व राष्ट्रके संचालन में अपनी निर्णायक भूमिका अदा करेगी, लेकिन आज की हकीकत अतीत का सपना ही होती है जो साकार होकर पुनः नए सपनों को जन्म देती है। इस स्वप्न का यथार्थ रूप हमें सर्वप्रथम स्वतन्त्रता संग्राम में देखने को मिलता है जब महिलाओं की राजनीतिक भूमिका को महत्ता के साथ स्वीकार किया गया। स्त्री राजनीति में एक निर्णायक शक्ति के रूप में उभरने लगी।

स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात् राजनीति का स्वस्थ रूप एक स्वप्न बनकर आया और यथार्थ की खुरदरी जमीन पर कभी खुशी, कभी गम की स्थितियों को उजागर करने लगा। जहाँ पर एक ओर शासनतंत्र की समस्त क्रियान्विति विघटनकारी मूल्यों की सूचक बन गयी वहीं पर दूसरी ओर महिलाओं ने राजनीति के क्षेत्र में प्रवेश किया और उनकी संख्या में वृद्धि भी हुई। स्वतन्त्रता पूर्व से ही देश की राजनीति में सरोजनी नायडू, विजयलक्ष्मी पण्डित, इन्दिरा गांधी, अरूणा आसफ अली आदि महिलाओं ने

अपनी अस्मिता को शीर्ष स्थान भी दिया। श्रीमती सुषमा स्वराज, शीला दीक्षित, उमा भारती, वसुन्धरा राजे, इन्दिरा परमार, कमला भील, डॉ. गिरिजा व्यास, सुमित्रा सिंह, प्रतिभा पाटिल जैसी महिलाओं ने अपनी प्रतिभा, क्षमता का पूरा परिचय देते हुए राजनीति की विविधवर्गीय बहुआयामी यात्राएँ तय की हंै। ममता बनर्जी एवं जयललिता ने तो राजनीति के क्षेत्र में तहलका मचाते हुए अपनी क्रांतिकारी भूमिकाओं के द्वारा सुर्खियों में आकर अपना महत्वपूर्ण स्थान बनाया है। 'डॉ. सुदेश बत्रा' के अनुसार, ''देश की लोकतांत्रिक व्यवस्था में महिलाओं की सक्रिय भूमिका जहाँ उन्हें देश के निर्माण की मुख्य धारा से जोडेगी, वहीं उनकी निर्णयात्मक क्षमता एवं प्रबन्धन कुशलता का लाभ भी समाज को मिलेगा। सबसे बड़ी बात यह है कि नारी-अस्तित्व एक इकाई के रूप में, यदि अपनी पहचान बनाता है तो राजनीति का क्षेत्र उसके लिए एक रचनात्मक चुनौती है। राजतंत्र का हिस्सा बनकर ही वह सामाजिक, कानूनी, आर्थिक और शैक्षणिक विकास को दिशा दे सकती है।''7

संदर्भ संकेत:

1. मनुस्मृति, नवम् अध्याय, 15,16,17
2. मधुकर श्याम चतुर्वेदी: प्रमुख भारतीय राजनीतिक विचारक, अध्याय 2, पृष्ठ 96
3. मधुकर श्याम चतुर्वेदी: प्रमुख भारतीय राजनीतिक विचारक, अध्याय 4, पृष्ठ 14
4. श्वूमजजश् ज्तंदेसंजपवद रू च्संजवश् त्मचनइसपबए ठववा टए च्ंहम 184
5. डॉ. पुखराज जैन: पाश्चात्य प्रतिनिधि राजनीतिक विचारक, पृष्ठ 75
6. डॉ. पुखराज जैन: पाश्चात्य प्रतिनिधि राजनीतिक विचारक, पृष्ठ 221, 222
7. डॉ. सुदेश बत्रा: हिन्दी उपन्यासों में नारी अस्मिता, पृष्ठ 21